Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 18, Issue No. 2, March–2021, (Special Issue), ISSN 2230-7540

पर्यावरण संरक्षण की सतत् विकास के लिए आवश्यकता

Dr. Sangita Singhal*

Associate Professor, Department of Economics, SD College, Muzaffarnagar, Uttar Pradesh

सार – ***पर्यावरण, एक देश की आर्थिक उन्नति में बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्राचीन काल से ही पर्यावरण व आर्थिक विकास में घनिष्ठ सम्बन्ध है। आज पर्यावरणीय मुद्दे विश्वव्यापी समस्या बन गये हैं। यह एक ऐसी समस्या है जिसके उत्तरदायी और कोई नहीं बल्कि मानव ही हैं। आज विकास की दौड़ में हम प्रकृति से खिलवाड कर रहे हैं जिसके परिणाम हमारे सामने हैं। वर्तमान समय में सम्पूर्ण विश्व में विभिन्न क्षेत्रों में विकास हो रहा है, जिसके फलस्वरूप लोगों का जीवन स्तर सुधर रहा है, लेकिन इस विकास की अंधी दौड में पर्यावरण एवं प्राकृतिक संसाधन पूरी तरह से प्रभावित हो रहे हैं। आज यह विचार करना जरूरी हो गया है कि क्या हमने, स्वतन्त्रता प्राप्ति से अब तक इन वर्षों में भारत के लिए सतत् विकास या टिकाऊ विकास की नींव तैयार की है? तथा इसके साथ ही यह विचार करना भी जरूरी है, कि सतत् विकास की प्रक्रिया प्रारम्भ से ही अंगीभूत क्यों नहीं की गई?***

----------X----------

सभ्यता के प्रारम्भ में पर्यावरणीय संसाधनों की मांग और सेवाएँ उनकी पूर्ति से बहुत कम थी इसका तात्पर्य है कि पर्यावरणीय प्रदूषण, प्रकृति की अवशोषण क्षमता के भीतर थी और संसाधन की निष्कर्षण दर इन संसाधनों के पुनर्सृजन की दर से कम थी, इसीलिए उस समय पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न नहीं हुई थी, किन्तु जनसंख्या की बढती आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए औद्योगिक क्रान्ति के आगमन से स्थितियाँ बदल गई। परिणामस्वरूप उत्पादन और उपभोग के लिए संसाधनों की माँग, संसाधनों की पुनर्सृजन दर से बहुत अधिक हो गई, जिससे पर्यावरण की अवशोषण क्षमता पर दबाव बढ़ गया है इस तरह माँग व आपूर्ति सम्बन्ध पूरी तरह से बदल गए जिससे वातावरणीय पटल पर गंभीर पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न हुई जो प्रदूषण, ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन, ओजोन क्षरण व अम्ल वर्षा इत्यादि के रूप में हमारे सम्मुख है **सतत् विकास की अवधारणा बरन्टलैंड कमीशन की 1987 में प्रकाशित रिपोर्ट "आवर कॉमन फ्यूचर" से ली गई है जिसमें सतत् विकास का अर्थ है - वर्तमान में लोगों की आवश्यकताओं व आकांक्षाओं को इस प्रकार पूरा करना कि आगे आने वाली पीढियों की अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने की सामथ्र्य पर कोई आँच न आए।** सतत् विकास की अवधारणा, आर्थिक विकास की नीतियों को पर्यावरण के अनुरूप बनाने पर जोर देती है। इसके अन्तर्गत प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण का प्रयास किया जाता है जिससे, उन्हें आने वाली पीढियों की जरूरतों को पूरा करने के लिए बचाया जा सके। यह संकल्पना, हमारे संसाधनों के उपभोग से जुडी है। अगर प्राकृतिक संसाधनों का उनके पुनःभंडारण से पहले इसी तरीके से तेजी से उपयोग होता रहा, तो यह हमारे पर्यावरण का स्तर पूरी तरह से बिगाड़ देगा और अगर इस पर अभी से ध्यान नहीं दिया तो प्रदूषण के कारण हमारे प्राकृतिक संसाधन पर्याप्त मात्रा में नहीं बच पायेंगे। **सतत विकास केवल तभी संभव है यदि पर्यावरण का संरक्षण किया जाता है तथा उसमें सुधार किया जाता है इसके अतिरिक्त कोई भी विकास पथ तभी सतत् या टिकाऊ है यदि कुल पूंजी परिसम्पत्ति या तो स्थिर रहती है या फिर उसमें वृद्धि होती है।**

किसी भी देश का संसाधन आधार तथा उसके जल, वायु तथा भूमि के स्रोत इत्यादि उस देश की सभी पीढियों (मौजूदा तथा भावी) की संयुक्त धरोहर है, अल्पकालीन लाभों के लिए इस धरोहर का विनाश करने का अर्थ है भावी पीढियों के हितों का हनन करना। सतत् विकास, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, ऊर्जा, कचरे तथा परिवहन इत्यादि के प्रबन्ध को प्रोत्साहन देता है। यह उत्पादन व उपभोग के उन आदर्शों पर आधारित है जो भविष्य में पर्यावरण को नुकसान पहुँचाए बिना किया जा सकता है। इसका उद्देश्य पर्यावरण के विरूद्ध चलने वाली विकास नीतियों में बदलाव लाना है, जिसमें संसाधनों का दोहन, निवेश की दिशा, तकनीकी विकास की स्थिति तथा संस्थागत परिवर्तनों को वर्तमान के साथ भविष्य की आवश्यकताओं के भी अनुकूल बनाया जा सके। यह आर्थिक विकास की दौड के प्रति हमें सचेत करता है, ताकि विकास तो हो, पर प्राकृतिक संसाधनों को कोई क्षति न पहुँचे।

www.ignited.in

1992 में रियो डी जनेरियों में भी सतत् विकास की संकल्पना को स्वीकार किया गया। इसमें इसकी व्याख्या "सभी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति और एक अच्छे जीवन की आकांक्षा संतुष्टि के लिए सभी को अवसर प्रदान करने के रूप में की गई। World Development Report 1992 में विकासशील देशों में पर्यावरण क्षति के स्वास्थ्य तथा उत्पादकता पर पडने वाले बुरे प्रभावों को सात वर्गों में विभाजित किया गया जैसे जल प्रदूषण व जल अभाव, वायु प्रदूषण भूमि अध, पतन (Soil Degradation) वनों का विनाश (Deforestation) ठोस व जोखिमी अपशिष्ट (Solid and hazardous waste), जैविक विभिन्नता का नाश (Loss of Biodiversity) तथा वायुमण्डलीय परिवर्तन (Atmospharic Changes)।

जल का सबसे अधिक प्रदूषण औद्योगिक अपशिष्ट (Industrial Waste) के कारण होता है जिन क्षेत्रों में औद्योगिक व खनन गतिविधियों का तेज विकास होता है इन क्षेत्रों में उद्योगों के अपशिष्ट नदियों में बहाई जाती हैं जिससे नदियों का जल प्रदूषित हो जाता है। जल प्रदूषण विकासशील देशों के 100 करोड लोगों के (जिन्हें स्वच्छ पेयजल उपलब्ध नहीं है) तथा 170 करोड लोगों के लिए (जिन्हें स्वच्छ वातावरण उपलब्ध नहीं है) सबसे गंभीर पर्यावरणीय समस्या है प्रदूषित जल पीने से तरह-तरह की बीमारियाँ फैलती है जिनका सबसे बुरा प्रभाव बच्चों पर पड़ता है। प्रतिवर्ष 90 करोड लोग जल प्रदूषण से जनित बीमारियों का शिकार होते हैं। इसी प्रकार वायु प्रदूषण मानव कृत तीन स्रोतों से पैदा होता है - ऊर्जा उपयोग, वाहनों का उत्सर्जन तथा औद्योगिक उत्पादन। मानव जाति का लगभग पाँचवा हिस्सा वायु प्रदूषण के असुरक्षित स्तरों में जी रहा है तथा गंभीर श्वास संबंधी बीमारियों व कैंसर इत्यादि कई बीमारियों के खतरों का सामना कर रहा है। सयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम द्वारा 1990 में किए गए एक अध्ययन से स्पष्ट है कि मानव गतिविधियों के कारण 1945 से 1990 बीच धरती के हरित (कृषि अधीन) क्षेत्र का लगभग 11 प्रतिशत अधःपतन हुआ है भूमि अधःपतन का मुख्य कारण भूमि कटाव या भूक्षरण (Soil Erosion) है इसके अतिरिक्त खारापन (Solinization) तथा जल क्रान्ति (Water Dogging) भी भूमि के अधःपतन के ही रूप है World Development Report 1992 के अनुसार, लगभग 6 करोड हेक्टेयर भूमि पर खारेपन का कारण गलत सिंचाई तरीकों को अपनाना है लगभग 2 करोड 40 लाख हेक्टेयर भूमि पर खारेपन के कारण उत्पादकता स्तर में तेजी से गिरावट हुई है। वन हमारे परिस्थितिकी (Ecology) तथा पर्यावरण में संतुलन बनाने में सहायक होते हैं, तथा जैविक विभिन्नता (Biodiversity) एवं प्राकृतिक व्यवस्थाओं को बनाए रखने में योगदान देते हैं परन्तु, मनुष्य इन सभी तथ्यों को भूलकर लगातार वनों का विनाश कर रहा है इसी प्रकार जैविक विभिन्नता के हनन का भी मुख्य कारण मानवीय गतिविधियाँ ही हैं। अन्धाधुन्ध औद्योगीकरण, शहरीकरण तथा पर्यावरण प्रदूषण के कारण वायुमण्डलीय परिवर्तन जैसे ग्रीन हाऊस (Green House Warning) तथा ओजोन परत का ह्रास (Depletion of Ozone Layer) तेजी से हो रहा है जो भावी पीढियों के लिए अनेक अनिश्चित व अपरिवर्तनशील दुष्प्रभाव पैदा कर रहे हैं। आज विकासशील देशों में इस बात का खतरा है कि मानव समुदाय अनजाने में या आर्थिक आवश्यकताओं के चलते उन्हीं संसाधनों का विनाश कर रहा है जिन पर उनका अस्तित्व निर्भर करता है। इस प्रकार पर्यावरण की क्षति का वर्तमान व भविष्य में मानव कल्याण पर तीन प्रकार से बुरा प्रभाव पड सकता हैं

1. पर्यावरण अधःपतन का मानव स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ सकता है। वायु, जल प्रदूषण तथा अन्य पर्यावरण जोखिमों से मानव स्वास्थ्य पर बुरा असर पडता है। प्रदूषकों के कारण तथा प्राकृतिक पर्यावरण में परिवर्तन द्वारा प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ पैदा होती है।

2. पर्यावरण अधःपतन से आर्थिक उत्पादकता गिरती है- खराब स्वास्थ्य से मानव उत्पादकता कम हो सकती है तथा पर्यावरण के अधःपतन से लोगों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से प्रयुक्त कई संसाधनों की उत्पादकता भी गिरती है मिट्टी के खारेपन तथा जल क्रान्ति से फसलों की उत्पादकता कम हो जाती है।

3. पर्यावरण अधःपतन से सुख सुविधाओं की हानि होती है - स्वच्छ वातावरण, स्वस्थ पर्यावरण मानव जाति को कई प्रकार की सुख सुविधाएँ प्रदान करता है। वनों का व्यापक प्रसार, स्वच्छ हवा, स्वच्छ जल इत्यादि जीवन की गुणवत्ता को बढाते है। देश के संसाधनों का भंडार हमारी ही संपत्ति नहीं है अपितु आने वाली पीढियों की भी धरोहर है अतः आज सकल घरेलू उत्पाद अधिकतम करने के लालच में हमें इन संसाधनों का अन्धाधुन्ध प्रयोग नहीं करना चाहिए।

भारत में पर्यावरण नीतिया तथा कानून:

भारतीय संविधान जिसे 1950 में लागू किया गया था, परन्तु सीधे तौर पर पर्यावरण संरक्षण के प्रावधानों से नहीं जुड़ा था। सन् 1976 में स्टॉकहोम सम्मेलन ने भारत सरकार का ध्यान पर्यावरण संरक्षण की ओर खींचा। सरकार ने 1976 में संविधान में संशोधन कर दो महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद 48ए तथा 51ए(जी)

जोडे गये। अनुच्छेद 48ए राज्य सरकार को निर्देश देता है कि वह पर्यावरण की सुरक्षा और उसमें सुधार सुनिश्चित करें तथा देश के वनों तथा वन्य जीवन की रक्षा करें। अनुच्छेद 51ए(जी) नागरिकों को कर्तव्य प्रदान करता है कि वे प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा करें तथा उसका संवर्धन करें और सभी जीवधारियों के प्रति दयालु रहे। स्वतन्त्रता के पश्चात बढते औद्योगीकरण शहरीकरण तथा जनसंख्या वृद्धि से पर्यावरण की गुणवत्ता में निरंतर कमी आती गई। पर्यावरण की गुणवत्ता की इस कमी में प्रभावी नियंत्रण व प्रदूषण के परिपेक्ष्य में सरकार ने समय-समय पर अनेक कानून व नियम बनाए हैं। इनमें से अधिकांश का मुख्य आधार प्रदूषण नियंत्रण व निवारण था।

पर्यावरण कानून व नियम निम्नलिखित हैं:-

- जल प्रदूषण सम्बन्धी कानून
- रीवर बोडर्स एक्ट, 1956
- जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1974
- जल उपकर (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1977
- पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986
- वायु प्रदूषण सम्बन्धी कानून
- फैक्ट्रीज एक्ट, 1948
- इनफ्लेमेबल्स सबस्टारसेज एक्ट, 1952
- वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1981
- पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986
- भूमि प्रदूषण सम्बन्धी कानून
- इण्डस्ट्रीज (डेवलपमेंट एण्ड रेगुलेशन) अधिनियम 1951
- इनसेक्टीसाइडस एक्ट 1968
- अर्बन लैण्ड (सीलिंग एण्ड रेग्युलेशन) एक्ट 1976
- वन तथा वन्य जीव सम्बन्धी कानून
- फोरेस्ट्स कंजरवेशन एक्ट, 1960
- वाइल्डलाईफ प्रोटेक्शन एक्ट 1972
- फारेस्ट (कंजरवेशन एक्ट) 1980
- वाइल्ड लाईफ प्रोटैक्शन एक्ट 1995
- जैव विविधता अधिनियम 2002

भारत में पर्यावरण सम्बन्धित उपरोक्त कानूनों का निर्माण उस समय किया गया था, जब पर्यावरण प्रदूषण देश में इतना व्यापक नहीं था। अतः इनमें से अधिकांश कानून अपनी उपयोगिता खो चुके हैं। परन्तु अभी भी कुछ कानून व नियम पर्यावरण संरक्षण में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

निष्कर्ष:

वर्तमान में पर्यावरण संरक्षण के प्रति वैश्विक स्तर पर जागरूकता बढ रही है। स्वच्छ ऊर्जा के क्षेत्र में तकनीकि प्रगति, नवीकरणीय ऊर्जा को बढावा तथा पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन सभी विकसित एवं विकासशील देशों में देखा जा रहा है। भारत में भी सभी योजनाओं के प्रारम्भ होने से पहले पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन की प्रक्रिया अपनाई जा रही है तथा पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव डालने वाली परियोजनाओं को प्रारम्भ होने से रोका जा रहा है। आज अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों से प्रमाणित होता है कि लगभग सभी देश पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान के संदर्भ में सकारात्मक प्रयास कर रहे हैं अतः, आज विकास, पर्यावरण की कीमत पर नहीं किया जा सकता है। क्योंकि व्यक्ति बिना हवा, पानी व स्वच्छ पर्यावरण के जिन्दा नहीं रह सकता है। **आज ऐसे विकास की आवश्यकता है जो पर्यावरण हितैषी होने के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में मददगार हो, क्योंकि तभी हम सतत् विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफल होंगे। यदि पर्यावरण के संरक्षण के लिए हमने जल्दी उचित कदम नहीं उठाए, तो मानव जाति का भविष्य अन्धकारमय भी हो सकता है।**

संदर्भ सूची:

1. वी.के. पुरी, एस.के. पुरी “भारतीय अर्थव्यवस्था”
2. डा. एन.एम. अवस्थी “पर्यावरणीय अध्ययन”
3. एस.के. ओझा “पर्यावरण अध्ययन”
4. डॉ. सविन्द्र सिंह “पर्यावरण अध्ययन”
5. www.drishtias.com
6. hi.m.wikipedia.org

7. https://hivikaspedia.in/...

Corresponding Author

Dr. Sangita Singhal*

Associate Professor, Department of Economics, SD College, Muzaffarnagar, Uttar Pradesh